International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(2): 14-16

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(2): 14-16
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 10-01-2022
Accepted: 14-02-2022

**अन्जु रानी**
शोध छात्रा चौधरी चरण सिंह विश्विद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत

**Corresponding Author:**
**अन्जु रानी**
शोध छात्रा चौधरी चरण सिंह विश्विद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत

# ऋग्वेद में रोग एवं चिकित्सा

## अन्जु रानी

**प्रस्तावना**

भारतीय संस्कृति का आधार वेदमूलक संस्कृति है जिसमें सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण की भावना अनुस्यूत है। जीवन–मृत्यु, लोक–परलोक, कर्मफल, जरा, दुःख इत्यादि की समस्याओं व उनके समाधानों का पूर्ण प्रतिपादन करने वाले वैदिक साहित्य में रोग एवं चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान होना स्वाभाविक है। वैदिक साहित्य में सर्वप्राचीन ग्रंथ 'ऋग्वेद' को माना जाता है। ऋग्वैदिक काल में ही रोग एवं उनकी चिकित्सा की खोज हो चुकी थी। ऋग्वेद में प्रत्येक सूक्त का कोई न कोई देवता है। अग्नि, इन्द्र, अप्, रूद्र आदि के साथ अश्विनौ भी देवता कहे गये है। ऋग्वेद में आधिदैविक दृष्टिकोण से विभिन्न देवताओं की प्रार्थना रोग निवारण के लिए की गई है, कितुं मात्र यही प्राचीन चिकित्सा नहीं थी। औषधियों के द्वारा भी चिकित्सा होती थी। वैदिक काल में लोक का जीवन वनस्पतिमय था। कृमियों तथा दोषों के अतिरिक्त विष भी रोगों के उत्पादक कारण हैं। अतः निर्विषीकरण के संबंध में अनेक ऋचायें उपलब्ध हैं।

**अश्विनौ**

अश्विनौ अर्थात् अश्विनी कुमार मुख्य रूप से चिकित्सा से संबंध रखते हैं और 'देवानां भिषजो' के रूप में स्वीकृत हैं। अश्विनी कुमार आरोग्य, दीर्घायु, शक्ति, प्रजा, वनस्पति तथा समृद्धि के प्रदाता कहे गये हैं। विपन्नों के सहायक होने से ही वे 'दिव्यभिषग्' कहे गये है।[1] ये अपने उपचारों से रोगों की शान्ति करते है।[2] अन्धों को पुनः दृष्टि दान करते है।

'तस्मा अक्षी नासत्या वि चक्ष आ धत्तं दस्त्रा भिषजावनर्वन्।'[3] अश्विनी देवताओं के अमरत्व को बनाये रखने के लिए अमोघ रसायन हैं। वे अपने उपासकों के रोगों की चिकित्सा करते हैं, अन्धे, रोगियों तथा पंगुओं के तो वे आश्रय है।

अश्विनौ के काय–चिकित्सा और शल्य–चिकित्सा संबंधी दोनों प्रकार के कार्य मिलते है। काय–चिकित्सा और शल्य–चिकित्सा ये दो प्रधान अंग हैं, जिन पर शेष सभी सामयिक अंग आश्रित रहते हैं। इन प्रधान अंगो के मिश्रित होने से अश्विनौ एक उपाधि थी, जो दोनों प्रधान अंगो में दक्ष व्यक्तियों को प्रदान की जाती थी, अथवा यह एक संज्ञा थी जो दोनों अंगो में निपुण वैद्य के लिये व्यवहृत होती थी।[5] इन्होंने जीर्णशीर्ण च्यवन ऋषि को नौजवान बना दिया।[6] विष्पला की टाँग कट जाने पर उसे लोहे की टाँग प्रदान कर दी।[7] नपुंसकों की पत्नियों को भी संतान प्रदान कर दी।[8] बन्धया गाय को दुधारू बनाया था[9] इत्यादि।

**रुद्र**

ऋग्वेद में चिकित्सा से संबंध रखने वाला दूसरा देवता रुद्र वर्णित है। रुद्र वैद्यों के मूर्धन्य हैं,[10] उनकी सौख्यकारी औषधियों के द्वारा उनके उपासक 'सौ वर्षों' पर्यन्त जीने की आशा करते हैं।[11] रुद्र से प्रार्थना की गई है कि वे अपने उपासकों के परिवारों से व्याधियों को दूर रखें।[12] द्विपदों और चतुष्पदों के प्रति मधुर बनें रहने का आग्रह है, जिससे सभी ग्रामवासी सुपुष्ट और अनातुर बनें रहें।[13] इसी संबंध में रुद्र को जलाष और जलाष–भेषज दो असामान्य विशेषण दिये गये है। रुद्र से प्रार्थना भी की गई है कि आप हमें बाह्य और आभ्यंतर दोनों प्रकार के रोगों से मुक्त कीजिए,[15] क्योंकि मैं आपको एक कुशल वैद्य के रूप में सुनता आया हूँ। आप हमें अपनी कल्याणप्रद और शान्तिप्रद औषधियाँ प्रदान करें!

ऋग्वेद में 'भेषज' शब्द आया है। इस शब्द से मिलने वाला ईरानी भाषा का शब्द बीसेजा (ठमेंहं) है या बैसज्य (ठमेंहं) है। बहुत से शब्द रोगवाचक और औषधवाचक मिलते है।[16]

''भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमि।''[16]

ऋग्वैदिक काल में वैद्यक एक व्यवसाय था। एक ऋचा में एक परिवार के एक सदस्य के व्यवसाय रूप में वैद्यक का उल्लेख किया गया है। कहा गया है– ''मैं कवि हूँ, पिता वैद्य हैं और माता चक्की पीसने वाली है। चिकित्सक की परिभाषा करते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि–

यत्रौषधीः समग्मत राजानः समितावि व।
विप्र स उच्यते भिषग्रक्षोहामींवचातनः ।।[17]

अर्थात् जहाँ औषधियाँ राजा की समिति–सभा के समान एकत्रित होती हैं और जो मेधावी उनके गुण–धर्म का ज्ञाता है, वही चिकित्सक कहलाता है, क्योंकि वह रोगों का शमन करने वाले विभिन्न यत्नों को प्रयुक्त करता है।

## औषधियों से रोगों का नाश

औषधियों के प्रयोग से रोग दूर होते हैं, (ओषं रूज ध्यति इति ओषधि) औषधि का अर्थ है– 'वेदना को हरने वाली वस्तुविशेष'। ऋग्वेद में औषधि के लिये 'माता' शब्द आया है।–

औषधीरिति मातरस्तद्वो देवीरूपब्रुवे।[18]

ऋग्वेद के दसवें मण्डल के 40–97 में औषधियों की स्तुति की गई है। इसे औषधिसूक्त कहा जाता है। इसमें विभिन्न औषधियों के रंग–रूप तथा प्रभावों का वर्णन किया गया है। एक ऋचा में अश्वावती, सोमावती, ऊर्जयन्ती और उदोजस् नामक औषधियों का उल्लेख है।[19] भिषक् औषधियों का ज्ञाता होता था, जिसके द्वारा वह रोगों का निवारण करता था। इसलिए वह रक्षोहा कहा जाता था।[20] ऋग्वेद में त्रिदोषवाद (वात, पित्र, कफ) का भी सकेत प्राप्त होता है।[21] ऋग्वेद में 'यक्ष्मा' रोग को दूर करने के लिए भी अनेक सूक्त प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद कें (10.161) में 'यक्ष्मा' रोग के लिए राजयक्ष्मा शब्द का प्रयोग किया गया है। 10.163 सूक्त में 'राजयक्ष्मा' रोग की निवृत्ति उपायों के साथ–साथ शरीर के अनेक अवयवों का भी वैज्ञानिक विवेचन प्राप्त होता है। मृत्युशैय्या पर पड़े हुए रोगी की जीवन की रक्षा के लिए भी ऋग्वेद (10.58) और (10. 60) में मन्त्र प्राप्त होते हैं। वैदिक आर्यों द्वारा 'वरुण' प्राकृतिक व्यवस्था का भी शाश्वत रक्षक देवता है। वरुण के पास सैकड़ों उपचार है, जिनसे वह मृत्यु को भी दूर भगा देता है।

## अन्य रोग संबंधी ज्ञान

गर्भाशय और योनि के रोगों को दूर करने के लिये ऋग्वेद मे **अग्नि** को बताया गया है। अग्नि राक्षसों का संहार करने वाले है। वे सब उपद्रवों को शान्त करें और जिन उपद्रवों से स्त्री रोगिणी बनी है, उन सबको अग्निदेव दूर कर दें।[22] जो रोग–रूपी पिशाच नारी के गर्भ को नष्ट करना चाहता है, उसे हम शरीर से दूर भगाते हैं।[23] कहा गया है– जिन पिशाच, राक्षसों और रोग व्याधियों ने देह को आक्रान्त किया है, उन सबको अग्निदेव विनष्ट कर दें।[24]

विषों में सर्प का विष सर्वांग्रणी है। मित्रावरुण से रक्षक बनकर घातक विषों से रक्षा करने का अनुरोध किया गया है–

''आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद्विश्वयन्मा न आ गन्।''[25]

शाल्मली वृक्ष को भी विष का आश्रय–स्थल कहा गया है, नदियों में उत्पन्न होने वाली गुल्म एवं लता आदि में उत्पन्न विष से रक्षा हेतु विश्वेदेवाः को संबोधित किया गया है–

''यच्छल्मलौ भवति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम।''[26]

ऋग्वेद में विष को दूर करने के लिए औषधियों का प्रयोग बताया गया है और इनकी संख्या निन्यानवे गिनाई गई है।[27] मधुला नामक औषधि विष को मीठा बना देती है, उसे अमृत बनाती है–

''अस्ययो जनं हरिष्ठा मधु त्वा मधुला चकार।''[28]

मोरनियों और सात नदियों को विष का अपसारक बताया गया है–

त्रिः सप्त मयूर्यः सप्तस्वसारो अग्रुवः।
तास्ते विषं वि जभ्रिर उदकं कुम्भिनीरिव।[29]

ऋग्वेद में इनके अतिरिक्त भी सौर चिकित्सा, जल चिकित्सा, वायु चिकित्सा और मानस चिकित्सा आदि के संकेत मिलते है–

## (क) सौर चिकित्सा

सूर्य–किरणों द्वारा प्राप्त चिकित्सा को सौर–चिकित्सा कहा गया है। ''कृषि जिनके लिये 'रक्षस्' 'निशाचर' और 'यातुधान' शब्द आये हैं, वे सूर्य से नष्ट होते है। मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, वनस्पति, औषधि, तृण आदि सबका जीवन सूर्य के प्रकाश पर ही अवलंबित है। सूर्य चराचर की आत्मा है।[30] सूर्य आयु को बढ़ाता है।[31] सूर्य बीमारी और प्रत्येक प्रकार के दुःस्वपन का नाश करते हैं।[32]

सूर्य हृदयरोग के चिकित्सक कहे गये है। कहा गया है– ''हे हितकारी तेजस्वी सूर्य आज उदय होते हुए तुम हृदय–रोग को नष्ट करो।[33] आगामी ऋचाओं से स्पष्ट किया गया है कि– 'वह रोग जिससे रोगी का शरीर हरा–सा हो जाता है।'[34] यहाँ शरीर के हरा बताने से ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त रोग आधुनिक भाषा में 'पीलिया' कहा जाने वाला रोग था, जो सौर–चिकित्सा से विनष्ट हो जाता है। वर्तमान समय में भी पीलिया के रोगी के लिए 'सूर्य की किरणें' लाभप्रद कही जाती हैं।

इस प्रकार विविध कृमियों और रोगों को सूर्य विनष्ट करता है। ऋग्वैदिक आर्य सौर–चिकित्सा में विश्वास रखते थे।

## (ख) जल चिकित्सा

ऋग्वेद में अन्य देवों के साथ अप् को भी देवता माना गया हैं उनसे आरोग्य की कामना की गई है। जल में सम्पूर्ण औषधियों को बताया गया है, वही सब औषधियाँ देता है।[35] जल औषधि–रूप है, यह सभी रोगों को दूर करने वाली औषधि के समान गुणकारी है, यही जल समस्त रोगों की दवा है, जल तेरे लिए औषध बनाये–

''आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीवघातनीः।
आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तू भेषजम्।।''[36]

प्रस्तुत ऋचा में जल को सब रोगों की औषधि कहा गया है।

## (ग) वायु चिकित्सा

वायु द्वारा भी शरीर से रोगों की निवृत्ति संभव है। ऋग्वेद में वायु को गुणकारी औषधि के समान कहा है। उनसे आयु को बढ़ाने की मंगलकामना की गई है–

''वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभुनो हृदे। प्रणआयूंषि तारिषत्।''[37]

ऋग्वेद में प्राण – अपान दोनों वायु का निर्देश किया गया है। प्राण से शरीर में बल भेजने और अपान से शरीर के पाप–रोगों को बाहर निकालने के लिये कहा गया है– ''वायु दो है, एक सिंधु से अथवा समुद्र से आने वाला और दूसरा भूमि के ऊपर ही दूर से आने वाला हैं इनमें से एक वायु तेरे पास बल लाता है और दूसरा दोष दूर करता है।[38] एक अन्य ऋचा में कहा गया है–

''आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद्रपः।
त्वंही विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे।।''[39]

अर्थात् 'हे वायो ! औषधि गुण को यहाँ मेरे पास ले आ। जो दोष है उसे तू मुझसे दूर ले जा। तू सब औषधियों का स्वरूप है, तू देवों का दूत होकर इस जगत् में घूम रहा है।
हवन में नाना प्रकार की औषधियाँ होती हैं। अग्नि उनके अणु बनाकर वायु को देता है। वायु चारो ओर उसे फैलाता है और आरोग्य उत्पन्न करता है। केवल औषधियों की सुगन्ध मात्र से मनुष्य का पित्त बढ़ता है।

### (घ) मानस चिकित्सा

अत्रि ऋषि ने मानस चिकित्सा को बहुत महत्वपूर्ण कहा हैं अत्रि ऋषि मानस चिकित्सा सम्बंधी विचार प्रकट करते हुए कहते हैं–

''आ त्वागम शन्तातिभिरथो अरिष्टतातिभिः।
दक्षं ते भद्रमाभार्षं परा यक्ष्मं सुवामि ते।।''[40]

अर्थात् '(हे रोगी) तेरे पास सुख करने वाले और आरोग्य बढ़ाने वाले बलों के साथ मैं आया हूँ। तेरे अन्दर कल्याण करने वाले और आरोग्य बढ़ाने वाले बलों के साथ मैं आया हूँ। तेरे अदंर कल्याण करने वाले बल को मैने भर दिया है, जो तुम्हारे अंदर रोग था, वह दूर कर दिया है।
यह मानस चिकित्सा है। इससे अन्दर ही अन्दर मानस–शक्ति से रोग दूर होते हैं। चिकित्सक के प्रति श्रद्धा–भाव रोग को दूर करने का साधन बन जाता है। इसी को हम विचार अथवा भावना–चिकित्सा का नाम भी दे सकते हैं।

### निष्कर्षः–

उपर्युक्त अध्ययन यह प्रस्तुत करता है कि ऋग्वैदिक काल में निसर्गोपचार का प्राधान्य रहा। प्राकृतिक चिकित्सा की उपादेयता भी स्वीकार की गई है। विविध ऋषियों के विविध–विचार उनकी तत्संबधी धारणा का परिचय देते है। ऋग्वेद में चिकित्सा सम्बंधी ज्ञान बीज–रूप में हमें मिलता है।

### सन्दर्भ सूची


1. उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना। ऋग्वेद, 8/18/8
2. ऋग्वेद, 8/22/10
3. वही, 1/116/16
4. वही, 10/39/3
5. अत्रिदेव विद्यालंकार : आयुर्वेद का बृहत् इतिहास, पृष्ठ 17
6. ऋक्, 1.116.10
7. वही, 1.116.15
8. वही, 1.116.13
9. वही, 1.116.22
10. वही, 2.33.4
11. वही, 2.33.2
12. वही, 7.46.2
13. वही, 1.114.1
14. गायपतिं मेघपति रुद्रं जलाषभेषजम्। वही, 1.43.4
15. विषूचीः अमीवाः विचातयस्व (ऋग्वेद, रूद्रसूक्त, 2.33.2)
16. वही, 1.14.9, वही, 2.33.4
17. वही, 10.97.6
18. वही, 10.97.4
19. वही, 10.97.7
20. विप्रः स उच्यते भिषग् रक्षोहामीवचातनः। वही, 10.97.6
21. वही, 1.38.6
22. वही, 10.162.1
23. वही, 10.162.3
24. वही, 10.162.2
25. वही, 7.50.1
26. वही, 7.50.3
27. नवानां नवतीनां विषस्य रोपुषीणाम्। वही, 1.191.13
28. वही, 1.191.10 व 11,12,13
29. वही, 1.191.14
30. वही, 1.115.1 (.....सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुष्श्च।)
31. वही, 8.48.7
32. वही, 10.37.4
33. वही, 1.50.12
34. वही, 1.50.12
35. वही, 1.23.20
36. वही, 10.137.6
37. वही, 10.186.1
38. वही, 10.137.2
39. वही, 10.137.3
40. वही, 10.137.4